International Journal of Sanskrit Research 2016; 2(6): 115-118

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2016; 2(6): 115-118
© 2016 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 23-09-2016
Accepted: 24-10-2016

उमेश पौडेल
शोधच्छात्र संस्कृत विभाग, जम्मू वि॰ वि॰, जम्मू व कश्मीर

Correspondence
उमेश पौडेल
शोधच्छात्र संस्कृत विभाग, जम्मू वि॰ वि॰, जम्मू व कश्मीर

सौन्दर्यशास्त्रीय तत्त्व– एक अध्ययन

उमेश पौडेल

सारांश
सौन्दर्यशास्त्र संवेदनात्मक–भावात्मक गुण–धर्म और मूल्यों का अध्ययन है। कला, संस्कृति और प्रकृति का प्रतिअंकन ही सौन्दर्यशास्त्र है। सौन्दर्यशास्त्र वह शास्त्र है जिसमें कलात्मक कृतियों, रचनाओं आदि से अभिव्यक्त होने वाला अथवा उनमें निहित रहने वाले सौन्दर्य का तात्त्विक, दार्शनिक और मार्मिक विवेचन होता है। किसी सुन्दर वस्तु को देखकर या सुन्दर वस्तु के बारे में सुनकर हमारे मन में जो आनन्ददायिनी अनुभूति होती है वही सौन्दर्य है। उसी सौन्दर्य को किसी के जीवन की अन्यान्य अनुभूतियों के साथ उसका समन्वय स्थापित करना इस शास्त्र का मुख्य उद्देश्य होता है।

कूटशब्दः सौन्दर्यशास्त्र, कला–तत्त्व, बिम्ब, प्रतीक, ऐन्द्रिय ज्ञान, लावण्य, ट्रान्सेण्डेटल ब्यूटी (Transcendental beauty)

प्रस्तावना
इस संसार में शायद ही ऐसा कोई व्यक्ति हो जो सुन्दर वस्तु को देखकर या सुन्दर ध्वनि को सुनकर उसकी ओर आकृष्ट न होता हो। मुस्कुराता हुआ गुलाब का फूल, पुष्पों के मध्य मड़राती हुई तितलियाँ, रंग–बिरंगी चिड़ियाँ, बिल्लियाँ, नारी–सौन्दर्य किसके मन को नहीं मोह लेता। अरुणोदय की स्वर्णिम आभा, सागर की हरहराती–उफनाती प्रचण्ड लहरें, गगन–चुम्बी पर्वत और मनोरम घाटियाँ, आकाश में जगमगाते सितारे और उनके बीच चमचमाता चाँद अपने भव्य सौन्दर्य से किसको प्रभावित नहीं करते ? लव कुश द्वारा गाये गये एक–एक पद्य हर किसी सछदय के छदय में चिरस्थायी हो जाते हैं। सुन्दर वस्तु में वह चुम्बकीय खिंचाव होता है, वह गुरूत्वाकर्षण होता है, वह सम्मोहन होता है कि मनुष्य उसकी ओर अपने आप खिंचता चला जाता है, खूबसूरत चीज पर नजर पड़ते ही उसका दिल खिलखिला उठता है, खुशी से मन, इतना अधिक फूल जाता है कि वह उसकी नकल उतारने लगता है, प्रकृति–सौन्दर्य से उत्प्रेरित हो वह स्वयं ललित कलाओं के रूप में सौन्दर्य–सृजन करने लगता है। ललित कलायें मानव की सौन्दर्य–आराधना और उपासना का दर्पण है।[i]
वस्तुतः शास्त्रदृष्टया सौन्दर्यशास्त्र नामक नवीनशास्त्र को हम भले ही पाश्चात्य विद्वानों की देन माने परन्तु इसके तत्त्व भारत में प्राचीनकाल में भी उपलब्ध होते थे जो अद्यावधि विद्यमान हैं, जिन्हें पाश्चात्य आज भी स्वीकार करते है। अतएव आज, भारतीय एवं पाश्चात्य सौन्दर्यशास्त्र में उपलब्ध सौन्दर्य–तत्त्व में कुछ समानता दृग्गोचर होती है। यथा– कलातत्त्व, काव्य–तत्त्व, कल्पना तत्त्व आदि।

❖ **सौन्दर्य की पाश्चात्य परिभाषा**

1. यूनान

- **प्लेटो (Plato 427-347 BC)** – सुन्दर, शिव और सत्य एक है। सुन्दर 'परम' है और पूर्ण है तथा सुन्दर के लिए नैतिक होना आवश्यक है।
- **अरस्तू (Aristotle 384-322 BC)** – अरस्तू का प्रसिद्ध ग्रन्थ पोयटिक्स है। इन का मानना है कि सौन्दर्य न तो अतिशय विशाल होता है और न ही अतिशय लघु होता है बल्कि दोनो के मध्य का औसत होता है। उन्होंने स्पष्टतः लिखा है कि सौन्दर्य का दर्शन नेत्रों से होता है।

2. रोम

- **प्लूटार्क (Plutarch 46-126 AD) –** सौन्दर्य एक प्रकार की कलात्मक कुशलता है।

3. जर्मनी

- **बाउमगार्तेन (Baumgartan 1714-1762) –** प्रकृति सौन्दर्य का चरम प्रतिमान है। इसलिए प्रकृति का अनुकरण ही सौन्दर्य–सृजन है। सौन्दर्यशास्त्र ऐन्द्रिय ज्ञान का विज्ञान है। ऐन्द्रीय माध्यम से पूर्णत्व की अनुभूति सौन्दर्य है।

- **काण्ट (Kant 1724-1804)** – सौन्दर्य चिन्तनशील धारणा का आनन्द है। इसका अस्तित्त्व वसतुनिष्ठ नहीं है किन्तु इसका उद्देश्य नैतिक शिवत्व की स्थापना करना है।
- **हीगेल (Hegel 1770-1831)** – 'आइडियल' की अभिव्यक्ति का प्रयास सौन्दर्य–सृजन है और इसका माध्यम अथवा अनुकरण ही सुन्दर है। इनके अनुसार मस्तिष्क प्रकृति से श्रेष्ठ है अतः सौन्दर्य प्रकृति से श्रेष्ठतर है।

4. इंग्लैण्ड

सौन्दर्य के मनोवैज्ञानिक विश्लेषण को प्रारम्भ करने का श्रेय इंग्लैण्ड के सौन्दर्यशास्त्रीयों को है। ये सौन्दर्यशास्त्री मुख्यतः दो निकाय के हैं– 'आइडियलिस्ट' और फॉर्मेलिस्ट।

- **थॉमस रीड (Thomas Reid 1710-1796) –** सौन्दर्य आध्यात्मिक चैतन्य है। इनके अनुसार सौन्दर्य दो प्रकार के हैं असली और नकली। असली सौन्दर्य सूर्य के समान प्रकाशित होता है औ नकली सौन्दर्य चन्द्रमा के समान।
- **रस्किन (Ruskin 1819-1900) –** सौन्दर्य ईश्वर की विभूति है। रस्किन ने मनुष्य में दो वृत्तियाँ मानी है– सहजवृत्ति और काल्पनिक वृत्ति। सहज वृत्ति के अन्तर्गत ही सौन्दर्य–बोध आता है।

5. रूस

- **बेलिन्स्की (1811-848) –** सौन्दर्य सामाजिक जीवन के जीवन्त यथार्थ का ऐसा प्रतिबिम्ब है, जो हमें आनन्द ही नहीं देता, प्रगतिशील होने की प्रेरणा भी देता है।
- **अज्ञात–** एक अन्य अज्ञात पाश्चात्य सौन्दर्यशास्त्री के अनुसार सौन्दर्यशास्त्र ललित कलाओं का दर्शन है। इसके अन्तर्गत उन ललित कलाओं के माध्यम से अभिव्यक्त सौन्दर्य एवं उसके रसास्वादन की चर्चाएँ होती है।

उपर्युक्त परिभाषा के आधार पर पाश्चात्य सौन्दर्य चिन्तन के विकास को तीन धाराओं में बाँटा जा सकता है–

- प्रथम धारा में मुख्यतः सुकरात और प्लेटो आते हैं, जिनके सौन्दर्य–दर्शन को क्रमशः सब्जेक्टिव और ट्रान्सेण्डेण्टल कहा जा सकता है।
- दूसरी धारा के चिन्तकों में थामस और रस्किन प्रमुख हैं। प्रायः इन सभी विचारकों ने द्रष्टा और दृश्य (सुन्दर) के द्वैत को दृष्टिपथ में रखते हुए सौन्दर्य पर विचार किया है। इस दूसरी धारा के चिन्तक अठारहवीं–उन्नीसवीं शताब्दी के हैं।
- तीसरा धारा के चिन्तकों का प्रारम्भ जर्मनी के सौन्दर्य चिन्तकों द्वारा हुआ, जिन्होंने प्लेटो की ट्रान्सेण्डेटल ब्यूटी (उत्तमोत्तम सौन्दर्य) को अपने चिन्तन का आधार बनाते हुए सौन्दर्य, वस्तु और चेतना की त्रयी को स्वीकार किया।

❖ सौन्दर्य की भारतीय परिभाषा

भारतीय परम्परा में सौन्दर्य का अत्यन्त विशद विवेचन प्राप्त होता है और इस विवेचन की परम्परा वैदिक काल से अद्यावधि देखी जा सकती है। भारतीय काव्यशास्त्र में आदिकाल से ही काव्य के आत्मतत्त्व पर विचार होता आया है। आचार्यों ने रस, ध्वनि, अलंकार, वक्रोक्ति, औचित्य आदि जिन काव्य–समीक्षा के मानदण्डों की विवेचना की, उनके मूल में निहित तत्त्व है 'सौन्दर्य तत्त्व'। इस तत्त्व को चमत्कार, चारुता, रमणीयता, मनोरम, सौन्दर्य आदि शब्दों से भी बोधित किया गया है। भारतीय–सौन्दर्य–चेतना अध्यात्म का ओर प्रवृत्त है।

1. वाल्मीकि

गम्यतां भवता शैलश्चित्रकूटः स विश्रुतः।
पुण्यश्च रमणीयश्च बहुमूलफलायुतः।।[ii]

2. वामन

काव्यं ग्राह्यमलंकारात्। सौन्दर्यमलंकारः।[iii] अर्थात् काव्य सार तत्त्व अलंकार है और अलंकार का अर्थ सौन्दर्य है अर्थात् सौन्दर्य का प्राण अलंकार है।

3. अभिनव गुप्त

यतः सौन्दर्यप्राणैव सा।[iv] क्योंकि यह कैशिकीवृत्ति सौन्दर्य–प्राण ही है। यहाँ सौन्दर्य शब्द का प्रयोग नाट्यव्यापार– गीत, नृत्य, अभिनय आदि कलाओं के लिए हुआ है।

4. माघ

क्षणे–क्षणे यन्नवतामुयैति तदेपरूपं रमणीयतायाः।[v] अर्थात् माघ ने सौन्दर्य को चिर–नवीन आकर्षण माना है।

5. मम्मट

अनुमीयमानोऽपि वस्तुसौन्दर्यबलाद्रसनीयत्वेनान्यानुमीयमानविलक्षणः।[vi] अर्थात् वस्तु के सौन्दर्य के कारण तथा आह्लाद का विषय होने से अन्य अनुमीयमान विषयों से रस विलक्षण प्रकार का होता है।

6. जगन्नाथ

रमणीयार्थप्रतिपादकः शब्दः काव्यम्।[vii] रमणीय अर्थ का प्रतिपादन करने वाला शब्द काव्य है। और रमणीयता का अर्थ है ऐसी ज्ञानगोचरता अर्थात् चेतना, जो लोकोत्तर आह्लाद प्रदान करती है।

7. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल

सौन्दर्य एक मनोदशा विशेष है, अनुभव का विषय है। यह एक गुण हैं, जो वस्तु के अन्त–बाह्य सांमजस्य से अथवा उसकी समग्रता में उत्पन्न होता है।

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि जहाँ भारतीय सौन्दर्यशास्त्रीय तत्त्व में प्रामुख्येन काव्यात्मतत्त्व (रस, अलंकार, ध्वनि, रीति, गुण, एवं औचित्यद्ध कलातत्त्व (ललित कलाएं– नाट्य, चित्र, संगीत, वास्तु, मूर्तिकलाद्ध दर्शनतत्त्व, कल्पना, बिम्ब, प्रतीक (कलागत सौन्दर्य) काव्यतत्त्व आदि की गणना होती है। वहीं पाश्चात्य सौन्दर्यशास्त्र में भी कल्पना, कला, सौन्दर्य (लौकिक एवं अलौकिक) इन्द्रिय–सुख, स्वच्छन्दता, विज्ञान तत्त्व, औदात्य आदि गणना होती है। इन्हीं परिभाषाओं से यह भी स्पष्ट है कि सौन्दर्यशास्त्र के अन्तर्गत प्रधानतः तीन प्रकार के सौन्दर्य पर विचार किया जाता है– 1) रूप–सौन्दर्य, 2) रंग–सौन्दर्य एवं 3) अभिव्यक्ति का सौन्दर्य।

कला तत्त्वः कला वह मानवीय क्रिया है जिसका उद्देश्य इन्द्रियों को आनन्द प्रदान करना या सुख प्रदान करना होता है। भारतीय एवं पश्चिमी परम्पराएँ जितनी प्राचीन है उतनी ही पुरातन कला–परम्परा भी है। यूरोपीय साहित्य में कला शब्द का प्रयोग शारीरिक या मानसिक कौशल के लिए ही अधिकतर हुआ है। यहाँ प्रकृति से कला का कार्य भिन्न माना गया है। कला का अर्थ है रचना करना अर्थात् वह कृत्रिम है। प्राकृतिक सृष्टि और कला दोनों भिन्न वस्तुएँ है। परन्तु भारत में 'सृष्टि' ही सर्वश्रेष्ठ'कला' मानी जाती है, और सृष्टिकर्त्ता सर्वोत्कृष्ट कलाकार। तदनुसार अन्यान्य कलाकार एवं उनकी कृतियाँ।

प्राचीन भारत में मुख्यरूपेण 64 कलाओं की चर्चा भरत, वात्स्यायन आदि आचार्यों ने की है। आगे चलकर उन्हीं कलाओं में से कुछ कलाओं की पृथक् गणना की जाने लगी क्योंकि ये रस तथा भाव–प्रधान मानी जाती हैं, इन्हीं कलाओं को 'ललित–कला' नाम से अभिहित किया गया। यतोहि इनमें अपेक्षाकृत अधिक सौन्दर्य तथा आर्कषण विद्यमान रहता है। मानवहृदय को आनन्द की अनुभूति कराने वाली वे कलाएँ पाँच हैं–

1) काव्यकला या नाट्यकला,
2) संगीत कला,

3) वास्तुकला या स्थापत्यकला,
4) मूर्तिकला एवं
5) चित्रकला

इन सभी कलाओं का सौन्दर्य के साथ चोली–दामन का सम्बन्ध होने के कारण इन्हें सौन्दर्यशास्त्र का प्रमुख तत्त्व माना जाता है।

कल्पना तत्त्वः भावनाओं के सहारे उद्‌बुद्ध होने वाली कलाकार की सूक्ष्म दृष्टि 'कल्पना' कहलाती है। कल्पना, सर्जन की प्रवृत्ति और कलागत मानसिकता मानव जीवन की नैसर्गिक विशेषताएँ हैं। मानव ने अपने चारों ओर के क्रिया कलापों, प्राणि–जगत् की भावनाओं और सबसे अधिक स्व–पर की अनुभूतियों में सुख–दुःख का विश्लेषण अपने जीवन के आरम्भ से ही किया है। उनके मन की यह दशा सौन्दर्य–विहीन नहीं है।
कल्पना ही वह तत्त्व है जिससे कलाकार को नूतन सृजन और अभिनव रूप व्यापार–विधान की शक्ति प्राप्त होती है। व्युत्पत्ति की दृष्टि (क्लृप् + अन + आ) से भी कल्पना का शाब्दिक अर्थ 'सृष्टि करना' ही है। Image से बना Imagination शब्द अंग्रेजी में इसी कल्पना का पर्याय है। कला–सृष्टि में कल्पना के तीन विशिष्ट कार्य हैं–
1) अप्रत्यक्ष वस्तुओं के बिम्बों का मानसिक पुनरानान,
2) इन बिम्बों का पुनः प्रत्यक्ष,
3) इन बिम्बों के समीकरण से कला–सृष्टि में योगदान।

पश्चात्य विचारकों के अनुसार 'कल्पना' या Imagination 'जीवन्त चित्र–विधान, विशेषकर, दृश्य अथवा गोचर, प्रत्यक्षीकरण से सम्बन्धित है।[viii]
प्राचीन भारतीय काव्यशास्त्र एवं संस्कृत साहित्य में 'कल्पना' शब्द के अनेक प्रयोग मिलते हैं किन्तु सर्वथा भिन्न अर्थ में। यथा– श्रीहर्ष ने नैषधीयचरित में 'श्रद्धालु संकल्पित कल्पनायाम्' में कल्पना शब्द का प्रयोग 'सिद्धि' के अर्थ में किया है। उन्होंने ही तृतीय सर्ग में पुनः भिन्न अर्थ में इस शब्द का प्रयोग किया है।[ix] भामह ने भी भिन्न अर्थ में इसका प्रयोग किया है।[x] किन्तु इनमें से एक भी प्रयोग कल्पना के आधुनिक अर्थ के समतुल्य नहीं है। आधुनिक सौन्दर्यशास्त्र या पाश्चात्य कला–चिन्तन की कल्पना को हम भारतीय काव्यशास्त्र की 'प्रतिभा' कह सकते हैं। समस्त भारतीय काव्यशास्त्रियों ने 'प्रतिभा' को काव्यहेतुओं में सर्वश्रेष्ठ स्थान दिया है। इसी प्रतिभा के द्वारा कोई कवि या कलाकार अपनी उत्कृष्ट रचना प्रस्तुत कर सकता है। भामह के अनुसार प्रतिभा के बिना काव्य रचना की तो बात दूर रही, काव्य का आस्वादन तक नहीं हो पाता।[xi] स्पष्ट है कि 'कल्पना' कलाकार की मानसिक सृजन–शक्ति है। अतः कविता एवं अन्य ललितकलाओं के प्रमुख तत्त्वों में रचना की दृष्टि से 'कल्पना' सर्वोपरि स्थान रखती है। इसी तत्त्व के कारण सृजित वस्तु में सौन्दर्य की अभिवृद्धि होती है।

बिम्ब तत्त्व (Imagery)
बिम्ब अर्थात् (Imagery) प्रतिभा, छाया या प्रतिबिम्ब। सौन्दर्यशास्त्र के प्रमुख तत्त्व में बिम्ब का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसकी अनिवार्यता इसी से प्रकट होती है कि कला–सृजन के क्षणों में कलाकार की अमूर्त सहजानुभूतियों को बिम्बों के द्वारा ही इन्द्रियग्राह्यता मिल पाता है। अतः बिम्ब–विधान ही बहुत अंशों में कलाकारी को सहजानुभूति को अभिव्यक्ति की सफलता को प्रमाणित करता है और कलाकार की सौन्दर्यचेतना को भी द्योतित करता है।
बिम्ब विधान कला का क्रिया–पक्ष है, जो कल्पना से उत्थित होता है। कला जगत् में कल्पना के विकास की एक सरणि है। कल्पना से बिम्ब का आर्विभाव होता है और बिम्बों से प्रतीक का। जब कल्पना मूर्त रूप धारणा करती है। तब बिम्बों की सृष्टि होती है और जब बिम्ब व्युत्पन्न अथवा प्रयोग के पौनःपुन्य से किसी निश्चित अर्थ में निर्धारित हो जाते हैं, तब उनसे प्रतीकों का निर्माण होता है। अतः सौन्दर्य–कला–विवेचन की तात्त्विक दृष्टि से बिम्ब कल्पना और प्रतीक का मध्यस्थ है।[xii]

प्रतीक (Symbol)
कला–जगत् के प्रतीकों का सौन्दर्यशास्त्रीय दृष्टि से ही विश्लेषण होना चाहिए, क्योंकि कलात्मक प्रतीकों का निर्माण सामान्य जन के द्वारा नहीं, कलाकारों के द्वारा होता है। बिम्ब और प्रतीक में मुख्य अन्तर यह है कि बिम्ब–विधान में जहाँ सम्मूर्त्तन औा चित्रोपमता को प्रधानता दी जाती है वहीं प्रतीक विधान में एक अभिव्यक्ति–लाघव के साथ सूक्ष्म सत्य, सौन्दर्य की संकेत–व्यंजना की जाती है। अतः काव्य एवं कला–जगत् में सूक्ष्म सौन्दर्य को व्यक्त करने के लिए प्रतीकों का प्रयोग किया जाता है, क्योंकि प्रतीकों के बिना सूक्ष्म सौन्दर्य की अभिव्यक्ति असम्भव है।

काव्यतत्त्व या काव्यात्मतत्त्व
भारतीय सौन्दर्यशास्त्र का मूलाधार काव्य शास्त्र है। इसके अर्न्तगत अन्य कलाओं का विवेचन प्रायः प्राप्त नहीं होता, किन्तु शब्द अर्थ के माध्यम से व्यक्त सौन्दर्य का जैसा परिपूर्ण तथा सूक्ष्म विवेचन यहाँ हुआ है वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। सौन्दर्यशास्त्र के जिन मौलिक तथ्यों की उद्‌भावना पश्चिम में आज हो रही है उनका साक्षात्कार भारतीय मनीषियों ने सहस्रों वर्ष पूर्व कर लिया था। भारतीय काव्यशास्त्र के अन्तर्गत परिगणित रस, अलंकार, रीति, वक्रोक्ति, ध्वनि एवं औचित्य, जिन्हें हम काव्यात्म मानते हैं, आदि सिद्धान्तों का विकास सौन्दर्य तत्त्व की ही निरन्तर खोज का परिणाम है। इन सभी काव्यात्म तत्त्वों के माध्यम से भारतीय विद्वानों ने सौन्दर्य के स्वरूप, मूलतत्त्व, प्रयोजन आदि का गहन विवेचन किया है।[xiii]

दर्शनतत्त्व
पाश्चात्य देशों में सौन्दर्य शास्त्र को दर्शन के अंग के रूप में स्वीकार किया गया है। अतः वहां दार्शनिक–चिन्तन के अन्तर्गत सौन्दर्य चिन्तन की परम्परा आरम्भ से ही रही है। प्लेटो ने तत्त्व चिन्तन की परिधि में सौन्दर्य का विवेचन भी किया है। अर्थात् पाश्चात्य सौन्दर्य शास्त्रीय तत्त्वों में दर्शन तत्त्व भी प्रतिष्ठित है। परन्तु भारतीय सौन्दर्य शास्त्र के अन्तर्गत दर्शन के सभी तत्त्वों में परम तत्त्व को ही प्रमुख माना गया है। भारतीय दार्शनिक चिन्तन प्रकृति तथा मानव के सौन्दर्य से अत्यधिक प्रभावित है। इसका प्रमाण वेदों में मिलता है। ''विश्वरूपाणि प्रतिमुंचते कविः''। अर्थात् वह ज्ञानवान् ईश्वर समस्त रूपों को प्रतिक्षण धारण करता है। यद्यपि भारतीय साहित्य एवं दर्शन का मूल प्रतिपाद्य सौन्दर्य नहीं रहा है पुनरपि वेद एवं उपनिषद् में सौन्दर्य का दर्शन होता रहा है। यथा – ''हरित्वता वर्चसा सूर्यस्य श्रेष्ठैः रूपैस्तन्वं स्पर्शयस्व''[xiv] अर्थात् सर्वत्र व्याप्त सूर्य के तेज से और उसके उत्तमोत्तम रूपों से हमारे देश का स्पर्श करें। स्पष्ट है कि भारतीय साहित्य में वेदों से लेकर उपनिषद तथा दर्शन शास्त्रों में सौन्दर्य का तात्विक रूप से स्फुट वर्णन उपलब्ध होता है।

विज्ञान तत्त्वः पाश्चात्य परम्परा सौन्दर्यशास्त्रीय तत्त्व में 'विज्ञान' की भी गणना करती है। फ्राइड के द्वारा प्रतिपादित मनोवैज्ञानिक विश्लेषण को आधार बनाकर कुछ विद्वानों ने विज्ञान को भी Aesthestics में जगह दी है। परन्तु भारतीय विचारधारा के अनुसार दर्शन एवं विज्ञान की अवधारणाएँ प्रायशः समान ही हैं। पुराणकार ने भी 'मनोरमा'[xv] शब्द का प्रयोग मनोवैज्ञानिक अर्थ में किया है। विज्ञान एवं दर्शन दोनों ही पदार्थों के स्वरूप, रचना, विकासक्रम, परस्पर सम्बन्ध आदि के सामान्य नियमों तथा आधारभूत सिद्धान्तों का विवेचन करते हैं। दोनों में केवल अन्तर यह है कि विज्ञान के निष्कर्ष तथ्यात्मक होते हैं परन्तु दर्शन के निष्कर्ष अन्ततः बुद्धि–कल्पनागम्य ही रहते हैं।

निष्कर्षः जब हम समीक्षात्मक दृष्टि से सौन्दर्यशास्त्र की चर्चा करते हैं तब हमारी दृष्टि द्विधा विभक्त होती है। प्रथम पश्चिम दृष्टि की ओर जाती है जिन्होंने Aesthestics को भैतिकता से अधिक जोड़ा है। अतः हमें पश्चिमी साहित्य में आत्मिक संस्पर्शता की कमी दृग्गोचर होती है। इसका जीवन्त उदाहरण फ्राइड एवं उनके अनुयायी हैं। परन्तु भारतीय दृष्टि वैसी नहीं है यहाँ प्रत्येक वस्तु में आत्मिक संस्पर्शता अत्यधिक है। पाश्चात्य जगत् में सेन्ट थॉमस के अतिरिक्त धार्मिक दृष्टि किसी में नहीं है परन्तु (पूर्व में) भारत भूमि एवं भारतीय ग्रन्थकारों ने धार्मिक तत्त्व अर्थात् आध्यात्मिक सौन्दर्य सर्वत्र विद्यमान है। पाश्चात्य चेतन जगत् को प्राथमिकता देता है परन्तु भारतीय दृष्टि में जितना सौन्दर्य चेतन जगत् में है उतना ही जड़ वस्तु में भी छुपा है। जड़–चेतन को एक देखना, चेतन का आरोप अचेतन पर करने के कारण भारतीय दृष्टि में सौन्दर्य अधिक है। अतः हमारी दृष्टि उच्चतर मानी जाती है। पाश्चात्य जगत् का कोई भी कलाकार (कवि) अचेतन जगत् तक नहीं पहुँच सका है। अतः भारतीय सौन्दर्यदृष्टि पाश्चात्य सौन्दर्यदृष्टि से अधिक समृद्धशाली है। निश्चयेन सौन्दर्यशास्त्र का लक्ष्य आलोचना करना नहीं बल्कि सौन्दर्य को पहचानना है। अतः सौन्दर्य–तत्त्व किसी न किसी रूप में भारतीय एवं पाश्चात्य काव्य–कला–दर्शन–संस्कृति आदि का मिलन बिन्दु है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. भारतीय सौन्दर्यशास्त्र की भूमिका, डॉ० नगेन्द्र, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली,1993
2. आधुनिक संस्कृत नाट्यसाहित्य और सौन्दर्यकलाशास्त्रीय तत्त्व, रीता तिवारी, प्रतिभा प्रकाशन, दिल्ली, 2014
3. सौन्दर्य, डॉ०राजेन्द्र वाजपेयी, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, 2012
4. सौन्दर्यशास्त्र के तत्त्व, डॉ० कुमार विमल, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2015
5. सौन्दर्यशास्त्र, डॉ० ममता चतुर्वेदी, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2014
6. काव्यप्रकाश, मम्मट, साहित्य भण्डार, मेरठ, 1989
7. काव्यालंकार, भामह, चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, 1977

---

[i] सौन्दर्य, डॉ॰ राजेन्द्र वाजपेयी, पृष्ठ संख्या 25

[ii] वा० रा०, 2/54/41

[iii] का० सू० वृ०, 1/1/1–2

[iv] अभि० भा०, अध्याय–1

[v] शिशुपालवध

[vi] मम्मट, काव्यप्रकाश, चतुर्थ उल्लास

[vii] रमणीयता च लोकोत्तराहलादजनकज्ञानगोचरता।। रसगंगाधर, 1/1

[viii] सौन्दर्यशास्त्र के तत्त्व, डॉ० कुमार विमल, पृ० 141

[ix] मदन्यदानं प्रति कल्पना या वेदस्त्वदीये हृदि तावदेषा।
निशोऽपि सोमेतरकान्तशङ् कामोङ्कारमग्रेसरमस्य कुर्याः।। नैषधीयचरितम्, 3/75

[x] प्रत्यक्षं कल्पनापोढ़ं सतोऽर्थादिति केचन।
कल्पनां नामजात्यादियोजनां प्रति जानते।। काव्यालंकार, 5/6

[xi] गुरुपदेशादध्येतुं शास्त्र जडधियोऽप्यलम्।
काव्यं तु जायते जातु कस्यचित्प्रतिभावतः।। काव्यालंकार, 2/5

[xii] सौन्दर्यशास्त्र के तत्त्व, डॉ० कुमार विमल, पृ० 217

[xiii] भारतीय एवं पाश्चात्य सौन्दर्यशास्त्र, डॉ० वेद प्रकाश जुनेजा, पृष्ठ संख्या, 28, 1987

[xiv] ऋग्वेद, 10/112/5

[xv] पत्नीं मनोरमां देहि मनोवृत्तानुसारिणीम्।
तरिणीं दुर्ग संसारं सागरस्य कुलोद्वाम्।। मार्कण्डेय पुराण